समाजदर्शी शोध पत्रिका

SAMAJDARSHI SHODH PATRIKA

अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका (त्रैमासिक)

International Research Journal (Quarterly)

वर्ष -2, अंक- 5-6 अप्रैल -सितम्बर 2016 ISSN : 2395-0374

प्रधान सम्पादक

डॉ॰ बबलू सिंह

हिन्दी विभाग

जे॰एस॰एच॰ (पी॰जी॰) कॉलिज, अमरोहा (उ॰प्र॰)

Scanned by CamScanner

समाजदर्शी शोध पत्रिका

साहित्य, शिक्षा, वाणिज्य, मानविकी एवं विज्ञान विषयों की समाजदर्शी

द्विभाषिक त्रैमासिक अन्तर्राष्ट्रीय शोध पत्रिका

वर्ष-1 अंक-5-6 (अप्रैल 2016 से सितम्बर 2016) ISSN No. 2395 - 0374

सम्पादक मण्डल

मुख्य संरक्षक :

डॉ. तिलक सिंह, डी.लिट्

प्रधान सम्पादक :

डॉ. बबलू सिंह, डी.लिट् सहायक प्रोफेसर

हिन्दी विभाग-जे.एस.एच. (पी.जी.) अमरोहा(उ0प्र0)

सम्पादक :

डॉ. अजय कुमार सहायक प्रोफेसर

हिन्दी विभाग - महामाया राजकीय महाविद्यालय

कौशाम्बी (उ0प्र0)

सम्पादक :

डॉ॰ हेमन्तपाल घृतलहर

सहायक प्राध्यापक हिन्दी विभाग :

शासकीय महाविद्यालय सनावल,

जिला-बलरामपुर (छत्तीसगढ़)

उपसम्पादक :

डॉ. श्रीमती आराधना कुमारी

डॉ. [illegible] कुमार दास

डॉ. वीर वीरेन्द्र सिंह

अन्य सम्पादक :

डॉ. मनन कौशल

डॉ. सुनील कुमार

परीक्षक मण्डल

साहित्य :

डॉ. धर्मेन्द्र कुमार

डॉ. मनु प्रताप सिंह

डॉ. श्रीमती [illegible]वश्री जायसवाल

डॉ. श्रीमती संयुक्ता चौहान

डॉ. रामविलास यादव

डॉ. श्रीमती स्वेता पूठिया

डॉ. भूवाल सिंह

डॉ. श्रीमती सुमन अग्रवाल

डॉ. देशमित्र त्यागी

डॉ. गरिमा सिंह

डॉ. बबीता त्यागी

डॉ. संजय जौहरी

डॉ॰ अभिषेक कुमार पटेल

शिक्षा :

डॉ. प्रवेश कुमार

डॉ. नितिन कुमार

मानविकी एवं वाणिज्य :

डॉ. अनिल रायपुरिया

डॉ. हरेन्द्र कुमार

डॉ. रमेश चन्द

विज्ञान :

डॉ. सौरभ अग्रवाल

डॉ. लल्लन प्रसाद

डॉ. राजेश कुमार पाल

डॉ. प्रवेश कुमार

Scanned by CamScanner

अनुक्रमणिका

कबीर की लोक चेतना	विश्वदीपक	7
कक्षा आठ में अध्ययनरत विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धियों पर मानसिक स्वास्थ्य का अध्ययन	महताब आलम	15
महिला विकास कार्यक्रमों के मार्ग में आने वाली बाधाएँ एवं समस्याएँ	महमूद अथर कमाल	23
आधुनिक शिक्षा का बदलता परिवेश	तेजपाल सिंह	32
[illegible] के दौर में लोकसाहित्य की चुनौतियाँ	डॉ. अजय कुमार	39
सूर के काव्य में लोक चेतना	डॉ. हेमन्तपाल घृतलहरे	42
[illegible] कबीर के अग्रदूत डॉ. बी.आर. अम्बेडकर	डॉ. धर्मेंद्र कुमार	49
[illegible] हिन्दी गजल : एक बहस	डॉ. मनु प्रताप सिंह	54
[illegible] में [illegible] की महिमा	विश्वयात्री डॉ. कामता कमलेश	60
डॉ. [illegible] अम्बेडकर : एक बहुआयामी व्यक्तित्व	डॉ. प्रभात कुमार	64
[illegible] के शैक्षिक दृष्टिकोण का [illegible] अध्ययन	डॉ. हरपाल सिंह शिशौदिया/ सोनिका चौधरी	70
[illegible] आलोचनात्मक अध्ययन	रामकमल शर्मा	78
[illegible]	बबलेश कुमार/डॉ. धर्मेंद्र सिंह/मंजू जोशी	83
[illegible] में प्रयुक्त [illegible]	डॉ. इन्दु गोस्वामी	86
[illegible] में '[illegible]' का अवदान	आदित्य कुमार जायसवाल	91
[illegible] Export financing Policies Globally [illegible] to shoe industry	Dr. Manish Tandan / Dr. Yograj Singh / Paritosh Sharma	97
[illegible] and Antioxidants	Dr. Neelam Bajpai	100
[illegible] and the growth of Microfinance [illegible] SWARN ROJGAR YOJNA [illegible] PRADESH	Dr. Manish Tandan/Dr. Anil Raiparia/ Mohit Rastogi	104
[illegible] Novel "Cry The Peacock"	Dr. Vinay Kr. Chaudhary	111
[illegible] Waste (E-Waste) [illegible]	Anita Kumari	114
[illegible] of Dr. Zakir Husain : An Analysis	Dr. Ankur Gupta	117
[illegible] in Relation to their Intelligence"	Ashok Kr. Vashisth/ Dr. Sami Urrehman Khan Suri	125

Scanned by CamScanner

ISSN No. 2395 - 0374
अप्रैल से सितम्बर 2016 अंक - 5-6

सूर के काव्य में लोक चेतना

डॉ० हेमन्त पाल घृतलहरे
सहा0 प्राध्यापक-हिन्दी
शासकीय महाविद्यालय सनावल
जिला बलरामपुर (छत्तीसगढ़)

हिन्दी साहित्य में यह उक्ति प्रसिद्ध है -
''सूर सूर तुलसी शशि, उडुगन केशव दास।
अब के कवि खद्योत सम्, जहँ-तहँ करे प्रकाश।''

अर्थात् सूरदास को हिन्दी साहित्य जगत (विशेषकर हिन्दी साहित्य के मध्यकाल के संदर्भ में) सूर्य की उपमा देकर श्रेष्ठतम् कवि सिद्ध करने का प्रयास किया जाता रहा है। हिन्दी साहित्य का यह मध्यकाल भक्तिकाल एवं रीतिकाल में विभाजित किया गया है और भक्तिकाल को हिन्दी साहित्य का 'स्वर्णयुग' मनाने के लिये अनेक तर्क दिये जाते रहे हैं। सूरदास इस भक्तिकाल के सूर्य कहे गये हैं तो निश्चित ही उनकी रचना में कुछ ऐसे तत्त्व होंगे, जिसकी पड़ताल जरूरी है।

भक्त कवियों को पढ़ने अथवा समझने के पहले यह जान लेना भी आवश्यक है कि भक्तिकाल के शरीर के पीछे भक्ति आन्दोलन की आत्मा खड़ी है। यह आत्मा बड़ी जागरूक और मजबूत है।

''मुक्तिबोध ने लिखा है कि समूचे भक्ति आन्दोलन के मूल में जनता के दु:ख-दर्द ही हैं और उन दु:ख-दर्दों को बड़ी जीवंत मानवीयता के साथ उभारने, उसमें एकमेक होकर सामने आने में ही भक्ति-आन्दोलन की शक्ति को देखा जा सकता है।[1] सूर का काव्य भी भक्ति आन्दोलन की इस शक्ति से अछूत नहीं है। मूलत: सूर अपनी मिट्टी से जुड़े हुए जन कवि थे। उनके काव्य में ब्रज-लोक-संस्कृति अपनी समग्रता के साथ प्रतिबिम्बित हुई है।[2] सूरदास लोक जीवन के कवि हैं। उनकी जड़ें लोक जीवन की गहराईयों तक पहुँच रखती है। इसीलिए उनका स्थान अद्वितीय है। हिन्दी के विद्वान ऐसा मानते हैं कि हिन्दी को महाप्रभु बल्लभाचार्य की सबसे बड़ी देन सूरदास हैं।[3] जिस पात्र (नायक), रचना व रचनाकार के साथ लोक खड़ा होता है वह अपराजेय होता है, वह कालजयी होता है और अपनी प्रासंगिकता के कारण सदा समकालीनता की श्रेणी में पंक्तिबद्ध होने को आतुर होता है।

समय के साथ बराबर खड़ा होना समकालीन होना है। हम जिस समय में हैं वह हमारा समकाल है, उर्दू की भाषा में इसे 'हमराज, हमसफर' की तर्ज पर 'हमकाल' कहना चाहिए। समकाल हमारी उपस्थिति का समय सूचक शब्द है। हम, कोई रचना या रचनाकार यदि वर्तमान समय की परिस्थितियों एवं सन्दर्भों से जुड़ता है तो यह समकालीन होना है और समकालीन

Scanned by CamScanner

होने की क्षमता या गुण समकालीनता है। समकालीन होना यानी आज भी प्रासंगिक होना। इसके लिये कालजयी होना अत्यंत आवश्यक है यदि रचना के सम्बन्ध में समकालीनता परिभाषित की जा रही हो। क्योंकि मूल्यवान रचनायें नये सन्दर्भों से जुड़कर नया पाठ देने की क्षमता रखती है। सूर की रचनाओं का इसी कसौटी पर परीक्षण और पड़ताल करने पर सूर कालजयी कवि के रूप में सामने आते हैं और उनके पद आज के संदर्भ में बहुत से नये अर्थ दे जाते हैं।

आज का समय सत्ता का समय है। हर व्यक्ति सत्ता पाने का लोलुप है। इस सत्ता के साथ पूंजीवाद बाजारवाद आदि भी परछाई की तरह आती है। सत्ता एवं बाजारवाद के बीच अपने अस्तित्व को बचाये रखने का संकट उत्पन्न हो गया है। लोगों को बाजार तो यदा-कदा दिख जाता है पर बाजारवाद दिखाई नहीं देता है।

हम आस्था, अस्मिता, स्वाभिमान और अकुंठित मानव चेतना की बहुत बातें करते हैं और इन्हें अपने परिवेश में न पाकर निराश और विक्षुब्ध होते हैं। बड़ी-बड़ी बातें करते हुए छोटी से छोटी बातों पर छोटे-छोटे प्रलोभनों पर हम बिक जाते हैं। व्यवस्था हमें सरलता से खरीद लेती है हम व्यवस्था के ढोल बन जाते हैं।4 लेकिन कबीर, तुलसी, जायसी, सूर आदि महाकवि व्यवस्था के आगे सिर झुकाने के बजाय व्यवस्था को चुनौती देने का काम करते हैं और सत्ता व व्यवस्था के सामने लोक की ओर से प्रश्न खड़े करने का काम करते हैं। यही लोक चेतना इनके काव्य को गरिमा और ऊँचाई देती है।

सूर के लिये कृष्ण अवतार हैं और अलौकिक ईश्वर हैं उनकी अटूट आस्था उन पर है। लेकिन कृष्ण की अलौकिकता पर गोपियाँ प्रश्न उठाती हैं।

''हरि काहे के अंतर्यामी
जे हरि मिलत नहीं यहि औसर, अवधि बतावत लामी।।
टपनी चोप जाम उठि बैठे और निरस वे कामी।
से कहँ पीर पराई जानै जो हरि गरूड़ागामी।''

यह प्रश्न शिकायत, मान, रूठना या अन्य किसी भी कारण से हो पर गोपियाँ कृष्ण के अन्तर्यामी (अलौकिक) रूप सत्ता को चुनौति दे रही हैं और लौकिक रूप की प्रतिष्ठा कर रही हैं। वह भी ऐसे समय पर जब भक्ति की भावना चरम पर है। यह चुनौति देना बड़े साहस का काम है और इसे तो सूर की गोपियाँ ही कर सकती हैं।

कृष्ण को गोपियों का स्वामी या गोपीनाथ भी कहा जाता है और इस रूप में भी उनकी सत्ता है। गोपियाँ नाराजगी में उनके इस सत्ता पर भी प्रश्न चिन्ह लगाती हैं –

''काहें को गोपीनाथ कहावत?
जे पै मणुकर कहत हमारे गोकुल काहे न आवत?
जे पैश्याम कूबरी रीझे तो किन नाम धरावत?
ज्यों गजराज काज के औसर औरै दसन दिखावत।
कहन सुनन को हम हैं ऊधो सूर अनत बिरमावत।।''6

यहाँ सूरदास गोपियों के माध्यम से लोक (जनता) का प्रश्न उपस्थित कर रहे हैं। सूर महज वात्सल्य और श्रृंगार के कवि ही नहीं, बल्कि सूर गहरी सामाजिक चेतनास के कवि भी प्रतीत होते हैं।

जहाँ तक सामाजिक वास्तविकता को सीधे ही उभारने की बात है अथवा समकालीन जीवन के प्रति सीधी प्रति-क्रियाओं का सवाल है, सूर अपने समय की समाजव्यवस्था, शासन, राजदरबार आदि पर व्यंग हैं।[7] गोपियाँ जो बार-बार उद्धव को भ्रमर कह कर संबोधित करती हैं, उनकी रस लोलुप्ता की भर्त्सना करती हैं, उसके मूल में सामंती मानसिकता वाले ह्रासशील लपटों का रूप ही विद्यमान है। कृष्ण के द्वारकाधीश बन जाने पर सुदामा के साथ किया गया कृष्ण का आत्मीय व्यवहार, जिसे लेकर सूर ने

Scanned by CamScanner

अनेक पद रचे हैं, सामंती समाज में विघटित होते हुए मैत्री सम्बन्धों पर कठोर व्यंग ही करता है।8

इस समय धन व पद की सत्ता का वर्चस्व था और आर्थिक सामाजिक गैर बराबरी समाज में थी, जाति-पाति के आधार पर लोगों से बर्ताव किया जाता था। कृष्ण और सुदामा बचपन के मित्र थे, दोनों साथ खेलते थे। बाल सुलभ चंचलता (निर्दोष मन) के माध्यम से सूर ने राजसत्ता एवं सामाजिक आर्थिक गैर बराबरी व वर्ण व्यवस्था पर प्रश्न उठाते हुए 'समानता' की माँग की है -

खेलत में को काको गौसैयाँ
हरि हारे जीते श्रीदामा, बरबस ही कत करत रिसैयाँ।
जाति-पांति हमते कछु नाहिं, नाहिं बसम तुम्हारी छैयाँ।
अति अधिकार जनावत यातैं, अधिक तुम्हारे हैं कछु गैयाँ।9

एक ही पद में सूर सामंती राज व्यवस्था, अर्थ व्यवस्था आदि सभी शोषण-पोषक सत्ता के विरोध में खड़े दिखाई देते हैं और लोकतंत्रात्मक 'समानता' (समता) की घोषणा करते जान पड़ते हैं। सामंती वातावरण में रहकर स्वतंत्रता की उद्घोषणा, व्यवस्था के प्रति विद्रोह है। पर लोक के साथ खड़े कवि को भय कहाँ? वह तो लोक की शक्ति और सहमति का प्रतीक है। सूर की चतुराई और काव्य कुशलता इस परिप्रेक्ष्य में अनूठी ही कही जायेगी। जिस काल में तुलसी वर्णव्यवस्था का समर्थन करते हुए रामचरित मानस में लिख रहे थे -

''बादहिं शूद्र द्विजन्ह सन हम, तुम्ह तें कछु घाटि।
जइन ब्रह्म सो विप्रवर आँखि देखावहिं डाँटि।।''

इसी समय सूर की वर्णव्यवस्था को अस्वीकार करता यह पद उनके साहस और दूरदर्शिता को प्रगट करता है। सूर समतामूलक समाज की स्थापना करना चाहते हैं।

सूर व्यक्तिवादिता के अहं की सत्ता पर भी सवाल उठाते हैं। अहंकारी व्यक्ति किसी के आगे नहीं झुकता, पर प्रेमी व्यक्ति अपने 'अहं' को त्यागकर सबके साथ समान व्यवहार करता है। इसलिए कृष्ण को 'ताहि अहीर की छोहोरिया, छछिया भरी छाँछ ये नाच नचाती हैं। प्रेम के वशीभूत ही कृष्ण गोपियों के इशारे पर नाचते हैं और तो और बाँसुरी भी उन्हें नचाती है

''मुरली तऊ गोपाल हिं भावति।
सुन री सखी! जदपि नंदनंदहि नाना भाँति नचावति।।
राखति एक पाँय ठाढे करि अति अधिकार जनावति।
आपुन पौढ़ि अधर-सज्जा पर करपल्लव सों पद पलुटावति।।''11

सत्ता सिंहासन में बैठा व्यक्ति इतना निर-अहंकारी नहीं हो सकता। परी हृदय के प्रेमासन में बैठा व्यक्ति यह कर सकता है। प्रेम और सहृदयता के माध्यम से सत्ता और अहंकार को सूर ने चुनौती भी दी और परास्त भी किया। तथाकथित क्रूर, अत्याचारी, दमनकारी, शोषक राजाओं की सत्ता को अपदस्थ कर सहृदय व्यक्ति (जो जनता के इशारे पर नाच सके) को अहंकार रहित राजा (कृष्ण) रूप में चित्रित करना सूर की यूटोपिया (राज व्यवस्था हेतु) कही जा सकती है।

कृष्ण राजा हो गये, मथुरा में रहने लगे और ब्रज की गोपियाँ उनकी विरह पीड़ा में जलने लगीं। गोपियों ने कृष्ण को अतने संदेश भेजे कि शायद मथुरा के कुएँ भर गए होंगे, पर कृष्ण लौटकर नहीं आए न संदेशवाहक आये -

'संदेसनि मधुबन कूप भरे।
जे कोउ पथिक गए हैं हयाँ ते फिरि नहिं अवन करे।।
कै वे स्याम सिखाय समीधे, कै वे खीच मरे?''12

यहाँ सूर की गोपियाँ दीन-दरिद्र अवस्था में

नहीं हैं वह प्रेमिका तो हैं पर प्रेमी की पुरूष सत्ता को चुनौती देती हैं। कल तक जो कृष्ण गोपियों से एक पल अलग नहीं रह सकता था, आज राजा होने के बाद गोपियों (लोक) से मिलने का समय उसके पास नहीं है। प्रेमी और राजा दोनों की सत्ता यहाँ पर है जिसे सूर की गोपियाँ चुनौती देती हैं। यहां नारी अस्मिता की महानता और गरिमा के साथ ही लोक का महत्त्व सूर प्रतिपादित करते हैं। कृष्ण वादा करके भी नहीं आए, यदि उनमें इतना अभिमान है तो नारी का आत्मसम्मान भी कम नहीं है। कृष्ण लौटकर नहीं आते, इसलिए गोपियाँ भी मथुरा नहीं जाती। यह नारी के आत्मसम्मान और गरिमा को स्थापित करता है।13 इसके अलावा यह एक राजा के सत्ता का प्रतिरोध (विरोध) भी है जो लोक की पुकार को नहीं सुनता। इसे सामंती सत्ता के विरूद्ध जनता (लोक) का प्रतिरोध के रूप में भी देखा जाना चाहिए। सूर की जनता अपने लापरवाही राजा से रूठ सकती थी। यह लोकतांत्रिक मूल्य सत्ता पर प्रश्न-चिन्ह लगाता है। गोपियाँ उस ज्ञान पर भी सवाल उठाती हैं जो उन्हें अपने लिये प्रांसगिक और समकालीन संदर्भों में उचित नहीं लगता। ऐसे वेदज्ञान उपदेश को वे बकवास (बकबक) कहती हैं -

''हमसो कहत कौन की बातें?
सुनि ऊधो। हम समुझत नाहीं फिरि पूछति हैं ताते।
को नृप भयों कंस किन मारयो को बसुधो-सुत आहि?
को व्यापक पूरन अविनासी को विधि-वेद अपार?
सूर वृथा बकवाद करत हौ या ब्रज नन्द कुमार।।14

सूर की गोपियाँ निर्गुण निराकार ईश्वर की सत्ता पर सवाल खड़ा करते हुये कहती हैं- 'निरगुन कौन देस को बासी?' लेकिन वे निर्गुण और सगुण के झगड़े में इसलिए नहीं पड़ती, जैसा कि आचार्य नन्द दुलारे बाजपेयी का कहना है कि उनकी दृष्टि में जिस सगुण कृष्ण को वह चाहती हैं वह कौन से निर्गुण से कम है? जो कृष्ण चार कोस पर विराजमान होकर भी कभी उनके पास नहीं आता, जिसके रूप में दर्शन तथा बोल तक सुनने को वे तरस जाती हैं वह किस निर्गुण से कम उनके लिये निर्गुण है।15

गोपियाँ जब उद्धव और कृष्ण को चोर और कपटी कहती हैं तो उसका अर्थ केवल प्रेमी और दूत से नहीं लिया जाना चाहिये। बल्कि इसे जनता (लोक) से कटे हुए सामंती राजा और उसके प्रतिनिधि के प्रति जन-आक्रोश के रूप में भी देखा जाना चाहिए। गोपियाँ जनता का प्रतिनिधित्व करते हुए कहती हैं कि जनता सब जानती है -

''मधुकर! जानत हैं सब कोऊ।
जैसे तुम और मीत तुम्हारे गुननि निपुन हौ दौऊ।।
पाके चोर हृदय के कपटी, तुम कारे और बोऊ।।16

सूर के पद लोकतंत्र के पत्रकारिता की तरह प्रतीत होते हैं जो समय-समय पर शासकों (प्रधानमंत्री एवं मुख्यमंत्री) के आलोचना-कर्म का दायित्व निभाते हैं।

सत्ता, धर्म और व्यवसाय इन तीनों का अटूट सम्बन्ध है सत्ता केन्द्र में होती है उसके इर्द-गिर्द धन और धर्म का बाजार लगा होता है जिससे तीनों फलते-फूलते हैं। सत्ता नगरीकरण की ओर बढ़ती है। इन नगरों, महानगरों में अमानवीयता, भ्रष्टाचार, अपराध, बाजारवाद, धन, धर्म और सत्ता का नशा बढ़ने लगता है। शहर और नगर के लोग अलग-अलग दिखाई देते हैं।

सूर मूलतः ग्राम्य चेतना के कवि हैं। उनके काव्य में मथुरा के नागर समाज और ब्रज के ग्राम्य समाज की टकराहट है। कंस की निरंकुश एकतंत्रात्मक व्यवस्था और आभारों को गणतंत्रात्मक व्यवस्था से टकराहट है।17 कंस निरंकुश राजतंत्र और कृष्ण लोकसम्मत राजतंत्र (लोकतंत्र) के प्रतीक हैं और उनकी लड़ाई लोकतंत्र (ग्राम) बनाम राजतंत्र (शहर) है। ग्राम और शहर के बीच विभाजन और दूरी (विरोध) है जो कि आधुनिक और उत्तर आधुनिक

Scanned by CamScanner

युग में और तीव्र गति से बढ़ रहा है। सूर का काव्य आज के समकालीन संदर्भों को समाहित किये हुए हैं। राजनीतिक नगरों का वातावरण आज भी दूषित है, राजधानी (राजनीति) में जाने वाला व्यक्ति बेदाग नहीं रह सकता। मथुरा के बहाने सूर (गोपियों) ने गंदी राजनीति पर सवाल खड़े किये हैं -

''विलग जनि मानहु ऊधौ प्यारे
वह मथुरा काजर की कोठरि, जे आवहिं ते कारे।
तुम कारे सुफलकसत कारे, कारे मधुप भंवारे।''18

मथुरा (राजनीति) काजल की कोठरी है, उसमें कैसो ही सयानो जाय, एक लीक काजल की लागि है पै लागि है।'' सूर इसके प्रति सचेत कर रहे हैं और राजनीति पर प्रश्नचिन्ह लगा रहे हैं।

मध्यकाल के समय भी जनता को खूब लूटा गया-कर, बाजार एवं अन्य माध्यमों से। बाजार तो कल भी थे, पर बाजारवाद नहीं था। आज सब कुछ बिकता है क्योंकि बाजारवाद हावी है। बाजार बाजार तक नहीं रह गया वह हमारे बेडरूम में प्रवेश कर गया है इसलिए बाजारवाद होकर भी आँखों से दिखाई नहीं देता। इस बाजार के प्रति भक्त और संत कवि भी सचेत थे। बाजार से सभी बचना चाहते थे।

कबीर भी अपने समय में बाजार से बहुत परेशान थे, उसकी लीलाएँ देख-देखकर बेहद आहत और क्षुब्ध थे - ''रमैया की दुलहिन ने लूटा बाजार'' कबीर के समय में बाजार और घर में फर्क था, कबीर घर से चलकर हाथ में लुकाठी लिए बाजार आये थे। आज बाजार हमारे घर के भीतर, उसके चप्पे-चप्पे में आ गया है हमारे जेहन और वजूद में विद्यमान है। बाजार की इस फितरत को सूरदास जी ने भी अपने समय में देखा और अनुभव किया।19 सूर की गोपियाँ जो पढ़ी-लिखी नहीं हैं वह भी इतना तो समझ जाती हैं कि शहर का बाजार उनके गांव आ गया है और इससे सावधान रहना है -

आयो घोष बड़ो व्यापारी।
लादि खेप गुन ज्ञान-जोग की ब्रज में आन उतारी।
फाटक देकर हाटक माँगत भौंरै निपट सुधारी

ब्रज की गोपियाँ न केवल बाजार से सावधान हैं बल्कि वे खुलकर बाजारवाद का विरोध भी करती नजर आती हैं। गोपियाँ कहती हैं कि तुम्हारे (बाजार के) लुभाने-भरमाने का कोई प्रभाव नहीं पड़ेगा।

'जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहैं।
यह व्योपार तिहारो ऊधारे! ऐसोई फिरि जै हैं।।
जापे लै आए हौ मधुकर ताके उर न समैहैं।
दाब छांड़ि कै कटुक निबौरी को अपने मुख खैहैं?''20

इस कविता को नए संदर्भ में पढ़ने पर नए अर्थ आते हैं। उद्धव के पास उनका माल (योग, ज्ञान की बातें) था और हमारे सामने आज बहुराष्ट्रीय कम्पनियों के माल हैं जो समाचार-पत्र, दूरदर्शन व अन्य माध्यमों से अपनी प्रशंसा (विज्ञापन) कर लुभाने-भरमाने की कोशिश कर रहे हैं। हम ठगे जा रहे हैं, मध्यम वर्ग विशेष रूप से प्रभावित है। हम अपने सहज विवेक का प्रयोग कर इस बाजारवाद से मुक्ति पा सकते हैं।

सूर के समय सूदखोरी (मूर, ब्याज देने की प्रथा) रही होगी तभी तो वह गोपियों के माध्यम से बाजारीकरण के इस दुष्प्रभाव की ओर लोक के माध्यम से ध्यान आकृष्ट कर रहे हैं-

''काहे को रोकत मारक सूधो?
सुनहु मधुप! निर्गुन-कंटकते राजपंथ क्यों रूधो?
कै तुम सिखै पाठाए कुब्जा कै कही स्यामधन जू धौ?
सूर मूर अक्रूर गए लै ब्याज निबेरत ऊधौ।''22

बहुराष्ट्रीय कम्पनियाँ हमारा रास्ता रोक रही हैं तथा हमारे नैसर्गिक विकास को बाधित कर रही हैं। ये मूलधन और ब्याज दोनों हमसे वसूल कर रही हैं।

Scanned by CamScanner

इस बाजारीकरण के युग में छल-कपट का व्यापार व्यवसाय चल रहा है -

''बिरचि मन बहुरि राच्यो आय।
टूटो जुरै बहुत जतनन करि तऊ पोष नहिं जाय।।
कपट हेतु की प्रीति निरन्तर नोई चोखाई गाय।
सूरदास दिगम्बर-पुर में कहा रजक-ब्यौसाय।।'22

इस तरह सूर ने गोपियों के माध्यम से अर्थसत्ता बाजार और बाजारवाद पर भी सवाल उठाया है और विवेक का मार्ग सुझाया है। 'जोग ठगौरी ब्रज न बिकैहै' कहकर गोपियों ने जैसी चुनौती दी है वह आज के समय में अनुकरणीय है।

सूर का काव्य आज के समकालीन संदर्भों में भी प्रासंगिक है। मानवीय मूल्यों को जगाने एवं 'तमसो मा ज्योतिर्गमय' की राह पर ले जाने में सूर और उनकी रचना सक्षम है, जो हमें लोकतांत्रिक समाज की स्थापना के संकेत करती है। सूर के काव्य में लोक चेतना सशक्त रूप में अभिव्यक्त हुई हैं।

सन्दर्भ सूची

1) भक्ति आन्दोलन और भक्तिकाव्य - शिव कुमार मिश्र, 2012 (पुनर्मुद्रण) लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-10

2) हिन्दी अनुशीलन (त्रैमासिक पत्रिका) सम्पादक - डॉ कामता कमलेश, मार्च-जून 2002, भारतीय हिन्दी परिषद, इलाहाबाद, प्रो0 गोविन्द रजनीश का लेख पृ0-17

3) हिन्दी अनुशीलन (त्रैमासिक पत्रिका) सम्पादक - डॉ कामता कमलेश, मार्च-जून 2002, भारतीय हिन्दी परिषद, इलाहाबाद, प्रो0 गोविन्द रजनीश का लेख पृ0-15

4) भक्ति आन्दोलन और भक्तिकाव्य - शिव कुमार मिश्र, 2012 (पुनर्मुद्रण) लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-10

5) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-73-74

6) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-73-74

7) भक्ति आन्दोलन और भक्तिकाव्य - शिव कुमार मिश्र, 2012 (पुनर्मुद्रण) लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-172

8) भक्ति आन्दोलन और भक्तिकाव्य - शिव कुमार मिश्र, 2012 (पुनर्मुद्रण) लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-172

9) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-22

10) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-9

11) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-26

12) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-46

13) भक्ति आन्दोलन और भक्तिकाव्य - शिव कुमार मिश्र, 2012 (पुनर्मुद्रण) लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-170

14) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-68

15) भक्ति आन्दोलन और भक्तिकाव्य - शिव कुमार मिश्र, 2012 (पुनर्मुद्रण) लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-174

16) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-48

17) हिन्दी अनुशीलन (त्रैमासिक पत्रिका) सम्पादक - डॉ कामता कमलेश, मार्च-जून 2002, भारतीय हिन्दी परिषद, इलाहाबाद, प्रो0 गोविन्द रजनीश का लेख पृ0-46

18) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र

Scanned by CamScanner

शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-48
19) भक्ति आन्दोलन और भक्तिकाव्य - शिव कुमार मिश्र, 2012 (पुनर्मुद्रण) लोक भारती प्रकाशन, नई दिल्ली, पृष्ठ-300-301
20) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-70
21) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-80
22) भ्रमर गीत सार-सम्पादक : आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, 2012, लोक भारती प्रकाशन इलाहाबाद, पृ0-162

Scanned by CamScanner